



नए भारत के लिए नीति आयोग का सुंदर सपना

संपादकीय

थिंक टैंक के रूप में काम करने वाले नीति आयोग ने लोकसभा चुनाव से कुछ महीने पहले नए भारत का सुंदर सपना दिखाने वाला एक दृष्टि-पत्र जारी किया है, जिसमें भारत की अर्थव्यवस्था को 2.7 खरब डॉलर से 4 खरब डॉलर पहुंचाने का लक्ष्य है। यह दस्तावेज इस देश के उद्योगपतियों, नियोजकों और मध्यवर्ग के साथ विदेशी निवेशकों के समक्ष भारत के आत्म-विश्वास और सुनहरी तस्वीर पेश करने के उद्देश्य से बनाया गया लगता है। हालांकि, नीति आयोग पहले के योजना आयोग की तरह योजनाओं के लिए राशि आवंटित नहीं करता है। उसका काम बौद्धिक और योजना के स्तर पर सलाह देना है। इसीलिए यह कह देना सरल लगता है कि हम भारत की आजादी के 75 साल पूरे होने पर यानी 2022 में 9 प्रतिशत की दर से विकास करेंगे लेकिन, उसे संचालित करने और निगरानी करने का अधिकार नीति आयोग के पास न होने से उसका दावा काल्पनिक ज्यादा लगता है। हालांकि नीति आयोग के अध्यक्ष स्वयं प्रधानमंत्री हैं और 'पचहत्तर वर्ष पूरे होने पर नए भारत की रणनीति' शीर्षक से जारी इस दस्तावेज को उन्होंने स्वयं देखा है।

इसलिए उम्मीद है कि विभिन्न मंत्रालय थिंक टैंक के सुझाव पर अमल करेंगे। आयोग का जोर श्रम सुधार तेज करने, महिलाओं की कार्यक्षेत्र में अधिक भागीदारी सुनिश्चित करने और सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने पर है। वह इस लक्ष्य को पाने के लिए एक तरह केंद्र सरकार की ओर से चलाई जा रही मौजूदा योजनाओं पर निर्भर कर रहा है और दूसरी ओर निवेश दर बढ़ाने और कृषि क्षेत्र को सुधारने की सिफारिश करता है। आयोग चाहता है कि 29 प्रतिशत की निवेश दर 2022 तक 36 प्रतिशत तक चली जाए और कर-जीडीपी का अनुपात 17 प्रतिशत से बढ़कर कम से कम 22 प्रतिशत तक हो जाए, क्योंकि विकसित देशों में यह अनुपात भारत का दो गुना है। आयोग ने खेती की आय दोगुनी करने के लिए कृषि का बाजार बनाने और गांवों को सड़क और इंटरनेट से जोड़ने का सुझाव दिया है। इस दस्तावेज के साथ दिक्कत यह है कि इसने देश के भीतर बढ़ती असमानता और बेरोजगारी को चिंता का विषय नहीं बनाया है। जहां उपाध्यक्ष राजीव कुमार कहते हैं कि रोजगार के मोर्चे पर संकट जैसे शब्द का प्रयोग उचित नहीं है। इसलिए नीति आयोग का सपने देखना अच्छी बात है लेकिन, उसी के साथ पैर जमीन पर भी होने जरूरी हैं।

Date: 21-12-18



दैनिक जागरण

अमेरिकी प्रस्ताव को दरकिनार करते हुए पश्चिम एशिया में प्रभावी होता भारत

हर्ष वी पंत, (लेखक लंदन स्थित किंग्स कॉलेज में इंटरनेशनल रिलेशंस के प्रोफेसर हैं)



इस महीने की शुरुआत में भारत संयुक्त राष्ट्र में लाए गए एक अमेरिकी प्रस्ताव पर मतदान के दौरान अनुपस्थित रहा। यह कवायद गाजा में हमास और अन्य चरमपंथी संगठनों की गतिविधियों के खिलाफ एक निंदा प्रस्ताव लाने जैसी थी। संयुक्त राष्ट्र महासभा में यह प्रस्ताव पारित नहीं हो पाया, क्योंकि इसके पक्ष में आवश्यक दो-तिहाई मत नहीं पड़े। इस प्रस्ताव के पक्ष में 87 वोट पड़े और विरोध में 58 जबकि 32 देश मतदान के दौरान अनुपस्थित रहे। भारत इन 32 देशों में से एक था। संयुक्त राष्ट्र में अमेरिका की स्थाई प्रतिनिधि निक्की हेली इस प्रस्ताव की प्रवर्तक थीं।

संयुक्त राष्ट्र महासभा को आईना दिखाने में उनका रवैया एकदम ठीक ही था जब उन्होंने कहा कि इजरायल के खिलाफ 500 से अधिक निंदा प्रस्तावों पर मुहर लगाने के बावजूद महासभा ने हमास के खिलाफ आज तक ऐसे एक भी प्रस्ताव को स्वीकृति नहीं दी है। हेली संयुक्त राष्ट्र में इजरायल की धुर समर्थक रही हैं, लेकिन वह हमास के खिलाफ उस निंदा प्रस्ताव को भी पारित नहीं करा पाई जिसकी पहल उन्होंने खुद की थी। इस अवसर पर भारत ने कूटनीतिक कौशल दिखाया। हालांकि मतदान के दौरान भारत के अनुपस्थित रहने का अर्थ यह नहीं था कि वह अमेरिकी प्रस्ताव के विरोध में था। इससे पहले उसने इस प्रस्ताव की प्रक्रिया निर्धारित करने के दौरान अमेरिका के पक्ष में मतदान किया था।

अमेरिका जब यह सुनिश्चित करना चाहता था कि इस प्रस्ताव की नियति दो-तिहाई बहुमत के बजाय साधारण बहुमत से तय हो तब भारत ने साधारण बहुमत वाले अमेरिकी प्रस्ताव के पक्ष में मतदान किया, मगर इस प्रस्ताव को पारित कराने में अमेरिका मामूली अंतर से मात खा गया, क्योंकि वह जापान जैसे अपने घनिष्ठ सहयोगी का समर्थन भी हासिल नहीं कर पाया। ऐसे में भारत ने अनुपस्थित रहना ही मुनासिब समझा, क्योंकि उसे पता था कि महासभा में अमेरिका इस प्रस्ताव के पक्ष में दो-तिहाई बहुमत जुटा पाने में सक्षम नहीं होगा।

हमास के खिलाफ मतदान के दौरान भारत के अनुपस्थित रहने पर देश-विदेश में तमाम लोगों की त्योरियां चढ़ी हैं। आलोचकों ने भारत के इस कदम को लेकर कई खतरे गिनाते हुए कहा कि आतंकवाद के सबसे ज्यादा पीड़ित देशों में से एक होने के बावजूद भारत की अनुपस्थिति आतंकवाद की अनदेखी करने जैसी है। भारत को इसके लिए भी आड़े हाथों लिया जा रहा कि निर्णायक क्षणों में वह इजरायल जैसे अपने घनिष्ठ सहयोगी के साथ खड़ा नहीं रहा। आखिर जो देश आतंकवाद के मसले पर पाकिस्तान को दुनिया भर में अलग-थलग करने की मुहिम में जुटा है उसके लिए यह महत्वपूर्ण है कि वह आतंक पीड़ित दूसरे देशों के पक्ष में भी अपनी प्रतिबद्धता प्रदर्शित करे।

यह सब सच है और भारत के पास आर या पार वाला रुख अपनाने की सुविधा भी है, मगर अंतरराष्ट्रीय संबंधों का मसला जरा अलग है। इस मोर्चे पर अन्य देशों की ही तरह भारतीय कूटनीति को भी सभी तरह के समझौते करने पड़ते हैं। मतदान पर ऐसे रुख के बावजूद इससे इन्कार नहीं कि मोदी सरकार ने इजरायल और फलस्तीन पर पश्चिम एशिया नीति को नए सिरे से तय किया है। नई नीति काफी साहसिक है, लेकिन इसे देश-विदेश में अपेक्षित तवज्जो नहीं मिली। भारत ने व्यावहारिक कारणों से इन दोनों देशों के साथ रिश्तों को संतुलित करने का प्रयास किया है। पुरानी नीति यह थी कि अगर कोई भारतीय नेता इजरायल जाए तो उसे यह दर्शाने के लिए फलस्तीन भी जाना होगा कि नई दिल्ली दोनों देशों के साथ कोई भेदभाव नहीं करती। इस लिहाज से 2017 में प्रधानमंत्री मोदी ने दो वर्जनाएं ध्वस्त कीं। एक तो वह इजरायल का दौरा करने वाले पहले भारतीय प्रधानमंत्री बने और दूसरे, इस दौरान उन्होंने फलस्तीन जाने की बात तो दूर, आधिकारिक रूप से उसका जिक्र भी नहीं किया।

हालांकि मोदी के इजरायल दौरे से पहले मई, 2016 में नई दिल्ली ने फलस्तीन प्राधिकरण के अध्यक्ष महमूद अब्बास की मेजबानी की थी और मोदी ने फलस्तीन मसले को लेकर उन्हें भारत के 'दृढ़' समर्थन का आश्वासन भी दिया था। तब भविष्य के फलस्तीन राष्ट्र की राजधानी के रूप में पूर्वी यरूशलम का जिक्र नहीं हुआ जिस पर नई दिल्ली का यही रुख था कि इस पर वह दोनों पक्षों के बीच बनी सहमति का सम्मान करेगी। पश्चिम एशिया में भारत का काफी ऊंचा दांव लगा है। सऊदी अरब, संयुक्त अरब अमीरात और ओमान के साथ भारत के घनिष्ठ सहयोग से इसकी पुष्टि भी होती है। इजरायल दौरे से पहले ही मोदी इन प्रमुख देशों की या तो मेजबानी कर चुके थे या फिर उन देशों के मेहमान बन चुके थे।

वास्तव में जब मोदी की 'एक्ट ईस्ट पॉलिसी' पर काफी चर्चा हो रही थी तब तक वह अपनी 'लुक वेस्ट' सक्रियता को खासी धार दे चुके थे। अक्सर माना जाता है कि तेल ही इन रिश्तों का आधार है, लेकिन यह नाता उससे कहीं बढ़कर है। प्रमुख देशों के साथ भारत की राजनीतिक सक्रियता बढ़ी है तो सामरिक सहयोग पर भी ध्यान केंद्रित हुआ है। इस साल की शुरुआत में मोदी के ओमान दौरे पर भारत ने दुकम जैसे महत्वपूर्ण बंदरगाह तक पहुंच सुनिश्चित की है। सैन्य एवं अन्य आवाजाही के लिए इस्तेमाल होने वाले इस बंदरगाह से भारत को हिंद महासागर में अपनी नौसैनिक स्थिति और मजबूत बनाने में मदद मिलेगी। वहीं 3,600 करोड़ रुपये के अगस्ता वेस्टलैंड हेलिकॉप्टर घोटाले के बिचौलिये क्रिशचियन मिशेल का संयुक्त अरब अमीरात द्वारा प्रत्यर्पण दर्शाता है कि दोनों देशों के बीच राजनीतिक रिश्ते किस कदर परवान चढ़ रहे हैं। यह सब ऐसे वक्त हो रहा है जब खाड़ी क्षेत्र राजनीतिक मोर्चे पर कई अहम बदलाव के दौर से गुजर रहा है।

ट्रंप प्रशासन ने ईरान के खिलाफ मोर्चा खोल लिया है और अरब देश इजरायल से निकटता बढ़ा रहे हैं जैसा उन्होंने पहले कभी नहीं किया। ओमान के सुल्तान काबूस बिन सईद ने अक्टूबर में इजरायली प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू का मस्कट में स्वागत किया। यह दो दशकों में इजरायली प्रधानमंत्री की किसी भी खाड़ी देश की पहली यात्रा थी। इसी दौरान सऊदी मूल के पत्रकार जमाल खशोगी की हत्या के बाद तुर्की और सऊदी अरब आमने-सामने आ गए। वहीं रूस भी इस क्षेत्र में एक प्रमुख खिलाड़ी के रूप में उभरा है। जब पश्चिमी देश अपनी ही समस्याओं में उलझे हुए हैं तब खाड़ी के देश नए साझेदारों की तलाश में हैं। भारत की सक्रियता ने वहां उसके लिए नई भूमिका गढ़ी है। आर्थिक एवं सामरिक मोर्चे पर इस क्षेत्र में भारत की भूमिका का विस्तार होना तय है। ऐसे में संयुक्त राष्ट्र में भारत का एहतियात भरा कदम इस बड़े बदलाव का एक मामूली सा पहलू है।

सरोगेसी की सीमाएं

संपादकीय



संसद के वर्तमान शीत सत्र के बारे में शुरू से ही यह धारणा थी कि इस बार वहां काम नहीं होगा, सिर्फ राजनीति होगी, हल्ले, हंगामे, बहिर्गमन और व्यवधान की खबरें ही आएंगी। जरूरी चीजें रह जाएंगी और राफेल, कर्जमाफी और चुनावी हार जैसे शब्द ही गूँजेंगे। लेकिन एक सप्ताह से ज्यादा समय गुजर जाने के बाद एक अच्छी खबर भी आई है। बुधवार को लोकसभा ने सरोगेसी यानी सरल शब्दों में कहें, तो पराई कोख से संबंधित विधेयक को पास कर दिया। इस विधेयक का मसला पिछले दो साल से चर्चा में है और संसद की स्थाई समिति व कुछ संशोधनों के बाद अब सिरे चढ़ता दिख रहा

है।

यह एक ऐसा मामला है, जिस पर दुनिया के कई देशों में काफी पहले से कानून बन चुके हैं, भारत शायद इस पर सबसे देरी से कानून बनाने वाले बड़े देशों में होगा। सरोगेसी यानी पराई कोख का मामला थोड़ा टेढ़ा है। इसका सीधा सा अर्थ है कि बच्चे (यानी भ्रूण) की मां कोई और होगी और वह अपने नौ महीने के शुरुआती जीवन को किसी और की कोख में गुजारेगा। पहले इसके लिए कानून की जरूरत नहीं थी, क्योंकि यह संभव ही नहीं था, लेकिन अब जब विज्ञान ने इसे संभव कर दिखाया है, तो इसकी तमाम जटिलताएं और नैतिक प्रश्न भी हमारे सामने खड़े हैं। इसकी तकनीक, जिसे विज्ञान की भाषा में एटीआर यानी असिस्टेड रिप्रोडक्शन टेक्नोलॉजी कहते हैं, वह ऐसी माओं के लिए वरदान की तरह है, जिनकी कोख किसी कारण से बच्चे का पोषण करने में समर्थ नहीं है। लेकिन ऐसी माओं की संख्या बहुत कम है, इसकी जगह इस तकनीक के इस्तेमाल की चाहत रखने वाले ऐसे लोग काफी ज्यादा हैं, जो धन के बदले अपने भ्रूण को दूसरों की कोख के हवाले करके नौ महीने की तकलीफों और उसके बाद की प्रसव पीड़ा से मुक्ति चाहते हैं। ऐसे ही लोगों की वजह से यह तकनीक पिछले दिनों काफी बदनाम भी हुई। इसकी चर्चा तब बहुत ज्यादा हुई, जब बॉलीवुड की कई हस्तियों ने अपने बच्चे हासिल करने के लिए इस रास्ते को अपनाया। फिर अचानक ही इस तरह की खबरें आने लगीं कि बच्चों की चाहत रखने वाले दुनिया भर के लोग भारत का रुख कर रहे हैं।

वे गरीब घरों की औरतों की कोख को किराए पर ले रहे हैं। सरोगेसी जो एक वरदान के रूप में आई थी, वह एक व्यवसाय के रूप में पैर पसारने लग गई। वह भी उस समय, जब दुनिया भर के कई विकसित देश व्यावसायिक सरोगेसी पर पाबंदी लगा चुके थे। अब जो कानून बन रहा है, उसके बाद भारत में भी इस सब पर पाबंदी लग जाएगी। अब सिर्फ जरूरतमंद ही यह राह अपना सकेंगे और किराए की कोख भी परिवार या नजदीकी रिश्तेदारों में ही किसी की होगी। इसके लिए रुपयों के लेन-देन पर भी पूरी पाबंदी रहेगी। पुरानी कहावत है- देर आयद, दुरुस्त आयद। लेकिन फिर भी एक सवाल तो पूछा ही जाना चाहिए कि हम हमेशा देर क्यों कर देते हैं? बदलती दुनिया की जरूरत के हिसाब से नियम-कायदे बनाने की हमारी चाल समय के साथ कदमताल नहीं करती और अचानक पता चलता है कि हम काफी पिछड़

गए। यही साइबर कानूनों के मसले पर भी हुआ था और यही साइबर सुरक्षा के मामले में भी। विश्व शक्ति बनने के हमारे सपने और हमारा यह ढुलमुल रवैया, दोनों एक साथ नहीं चल सकते, दोनों में किसी एक को छोड़ना ही होगा।

Date: 20-12-18

फिर बहाल हुए मालदीव से पुराने दौर के रिश्ते

रंजीत कुमार, (वरिष्ठ अधिवक्ता)

चीन समर्थक राष्ट्रपति अब्दुल्ला यामीन को पिछले महीने चुनावों में हराकर पहले विदेश दौरे पर भारत आए राष्ट्रपति इब्राहीम सोलेह भारत और मालदीव के रिश्तों में सामरिक सहयोग का नया दौर शुरू करेंगे। माना जा रहा है कि नई दिल्ली में 17 दिसंबर को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी से राष्ट्रपति सोलेह की बातचीत के बाद जो साझा बयान जारी हुआ है, उस पर पूर्व राष्ट्रपति नशीद की छाप है। मालदीव के साथ रिश्तों को पटरी पर लाने और नए दौर में ले जाने में छह साल लग गए। इस दौरान भारत और मालदीव के बीच रिश्ते तनावपूर्ण होते गए, जबकि पूर्व राष्ट्रपति यामीन चीन के दौरे करते रहे।

केरल के समुद्र तट से महज 500 किलोमीटर दूर पौने चार लाख आबादी वाला मालदीव भारत के लिए महज एक पड़ोसी द्वीप देश ही नहीं है। हिंद महासागर में इसकी भू-सामरिक स्थिति न केवल भारत, बल्कि बाहरी ताकतों के लिए भी काफी अहमियत रखती है, इसीलिए जब मालदीव के पिछले शासक अब्दुल्ला यामीन अपने निजी स्वार्थों की पूर्ति के लिए चीन की गोद में खेलने लगे, तो न केवल भारत, बल्कि अमेरिका और यूरोपीय संघ जैसी ताकतें भी चिंतित हो गई थीं। न केवल चीन से गहराता रिश्ता भारत के लिए चिंता पैदा कर रहा था, बल्कि पाकिस्तान भी मालदीव के उग्र-इस्लामीकरण के षड्यंत्र में जुट गया था। ये खबरें भी थीं कि मालदीव के युवा इस्लामी स्टेट की ओर आकर्षित होने लगे थे। ऐसा लगा कि मालदीव अब कभी चीन के कब्जे से बाहर नहीं निकलेगा। लेकिन मालदीव में जनतंत्र के बल पर सत्ता संभालने वाले नए राष्ट्रपति इब्राहीम सोलेह अपने पहले विदेश दौरे पर 16 से 18 दिसंबर तक भारत आकर जब यह भरोसा दिला गए कि उनका देश भारत के सुरक्षा हितों के खिलाफ कुछ नहीं करेगा, तो भारतीय सामरिक हलकों में राहत की सांस ली गई।

पिछले राष्ट्रपति अब्दुल्ला यामीन ने देश को चीन के कर्ज तले इतना दबा दिया था कि नई सरकार के लिए अपना दैनिक खर्च चलाना मुश्किल लगने लगा था। इसी से उबरने के लिए मालदीव ने भारत से 25 से 35 करोड़ डॉलर की सहायता मांगी थी। भारत ने भी उदारता दिखाते हुए मालदीव को 1.4 अरब डॉलर की वित्तीय मदद दी। इससे मालदीव सरकार को अपना दैनिक खर्च चलाना आसान होगा। भारत मालदीव के रक्षा क्षेत्र से लेकर सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए भी लगातार मदद देता रहा है। लेकिन मालदीव के पिछले राष्ट्रपति सत्ता में बैठे रहने और अपना बैंक खाता बढ़ाते रहने की नीयत से ही शासन में रुचि ले रहे थे। राष्ट्रपति सोलेह ने भारत को आश्वस्त किया है कि हिंद महासागर के एक बड़े इलाके में भारत अपना स्वाभाविक दावा बरकरार रख सकेगा। पर्यटन विकास के नाम पर चीन मालदीव से कुछ द्वीप हासिल करने में सफल हो गया था, इसलिए नए राष्ट्रपति के सामने एक बड़ी चुनौती होगी कि किस तरह इन द्वीपों को फिर अपने कब्जे में लिया जाए।

सामरिक हलकों में यह आशंका थी कि जिस तरह श्रीलंका के हम्बन्टोटा बंदरगाह के विकास का ठेका लेकर चीन ने कर्ज चुकाने के बदले काफी बड़ा भूभाग लीज पर ले लिया, उसी तरह मालदीव के द्वीपों को भी वह कहीं अपने कब्जे में न कर ले। मगर अब भारत ने जिस तरह मालदीव को 1.4 अरब डॉलर की वित्तीय मदद का ऐलान किया है, उससे मालदीव चीनी चंगुल से बाहर निकल सकता है। सोलेह ने यह आश्वासन भी दिया है कि उनका देश भारत के साथ तालमेल करके अपने समुद्री इलाके की चौकसी करेगा और अपने भूभाग का इस्तोमाल भारत के खिलाफ नहीं होने देगा। साफ है, मालदीव और चीन के विकसित होते रक्षा संबंधों को भारी धक्का लगेगा। चीन को खुश करने के लिए ही पिछले राष्ट्रपति यामीन ने भारत से लिए दो हेलीकॉप्टरों को लौटाने का एलान कर दिया था, पर नए राष्ट्रपति ने इस फैसले को पलट दिया। मालदीव के द्वीपों पर भारत ने कोस्टल रडार लगाने की योजना पर काम शुरू किया था। यह अब फिर जोर पकड़ेगा। मालदीव के समुद्री इलाके की चौकसी में भारतीय पोत गश्ती करेंगे। साफ है, मालदीव पर चीन-पाक गठजोड़ के दबदबे को खत्म कर भारत अपना स्वाभाविक दावा बहाल करेगा।
